भारतीय नागरिकता - इतनी आसान क्यों ?

कुछ दिन पूर्व एक प्रतिष्ठित अंग्रेजी अखबार में एक समाचार छपा था जिसका सार कुछ इस प्रकार था। अभी जर्मनी के छः करोड़ दस लाख लोगों ने अपने चांसलर का चुनाव किया। परन्तु जर्मनी के तेहत्तर लाख निवासी इस चुनाव में भाग लेने से वंचित थे। ये वे जर्मन हैं जिन्हें जर्मनी की नागरिकता प्राप्त नहीं है। जर्मनी के बेसिक कानून, जो वहाँ का संविधान है, के अनुसार विदेशियों को वोट देने की पात्रता प्राप्त करने के लिए कई शर्तें पूरी करनी पड़ती हैं। कम–से–कम आठ साल तक जर्मनी में निवास, जर्मनी के संविधान के बारे में ज्ञान तथा उसे दिल से स्वीकार करना किसी विदेशी के लिए नागरिकता प्राप्त करने हेतु मूलभूत आवश्यकता है। पर इन न्यूनतम अर्हताओं को पूरा करने के बाद भी एक बहुत बड़ी संख्या को नागरिकता नहीं दी जाती। नीलफुर शायगन, उम्र ३४ वर्ष, का जन्म एवं लालन–पालन जर्मनी में हुआ। उसके माता–पिता पचास के दशक में ईरान से जर्मनी आए थे। अभी हाल में संपन्न हुए आम चुनाव में वह मत नहीं दे पाई। अठारह वर्ष की आयु में पहली बार उसने जर्मन नागरिकता हेतु आवेदन किया था। आवेदन निरस्त होने के बाद जर्मन पासपोर्ट प्राप्त करने हेतु दो बार पुनः प्रयास किया। बार–बार की असफलता से तंग आकर उसने प्रयास करना ही छोड़ दिया।

जर्मनी और भारत की स्थिति बहुत भिन्न है। पिछले कई वर्षों से भारत के राजनीतिज्ञ तथा राजनैतिक पंडित यह बहस कर रहे हैं कि विदेश में जन्मे भारतीय नागरिकों को सर्वोच्च संवैधानिक पदों पर आसीन होने दिया जाए या नहीं। वास्तविकता में यह विषय विदेशियों को भारतीय नागरिकता प्रदान करने के व्यापक विषय का एक अंग मात्र है। शरद पवार, पी. ए. संगमा, जयललिता जैसे नेताओं ने सोनिया गाँधी को दृष्टिगत रखकर जिस विषय को आगे बढ़ाया है, उसे नागरिकता के व्यापक संदर्भ में देखने की आवश्यकता है।

भारत के संविधान में नागरिकता संबंधी प्रावधान भाग दो (अनुच्छेद ५ से ११) में हैं। अनुच्छेद ५ संविधान के प्रारंभ पर नागरिकता से संबंधित है। अनुच्छेद ६ एवं ७ पाकिस्तान से आने वाले या पाकिस्तान जाने वालों के बारे में है। अनुच्छेद ८ का विषय है भारत के बाहर रहने वाले भारतीय मूल के व्यक्तियों के नागरिकता के अधिकार। विदेशी राज्यों की नागरिकता ग्रहण करने वाले व्यक्तियों के संबंध में अनुच्छेद ९ में प्रावधान हैं। अनुच्छेद १० संसंद को यह अधिकार देता है कि वह नागरिकों की नागरिकता की नियमन या समाप्ति संबंधित कोई भी कानून बनाए।

इसी को अधिक स्पष्ट करते हुए अनुच्छेद ११ में कहा गया है, 'इस भाग के पूर्वगामी उपबंधों की कोई बात नागरिकता के अर्जन और समाप्ति के तथा नागरिकता से संबंधित अन्य सभी विषयों के संबंध में उपबंध करने की संसंद की शक्ति का अल्पीकरण नहीं करेगी।' सरल शब्दों में कह सकते हैं कि संसंद को पूर्ण अधिकार है कि वह नागरिकता प्रदान करने, नागरिकता समाप्त करने एवं इस संबंध में किसी भी प्रकार का अंकुश लगाने हेतु कोई भी कानून बना सके। संसंद के इस अधिकार पर संविधान का कोई अनुच्छेद किसी भी प्रकार की कोई रोक नहीं लगाता। अनुच्छेद ११ के अंर्तगत प्राप्त अधिकारों का उपयोग कर संसंद द्वारा नागरिकता अधिनियम, १९५५ पारित किया गया।

© All Rights Free

१९५५ में, जब यह अधिनियम पारित हुआ था, देश कुछ वर्ष पूर्व ही स्वतंत्र हुआ था। नयी स्वतंत्रता का नशा नयी शादी के नशे की तरह देश पर छाया हुआ था। शायद इसीलिए किसी ने यह सोचा ही नहीं कि आप्रवासी देश के लिए समस्या बन सकते हैं, यद्यपि दो सदी पूर्व ही आप्रवासी के रूप में आने वाले अंग्रेजों ने सत्ता हथियाई थी। आश्चर्यजनक बात यह है कि १९५५ में सत्तासीन लोगों ने इस संभावना पर विचार भी नहीं किया कि इतिहास दोहराया जा सकता है। परदेसियों के खतरे के विरूद्ध सुरक्षात्मक प्रावधान करने की आवश्यकता की बात उस समय के शासक वर्ग के मानस से कोसों दूर थी। इतिहास दष्टि के अभाव से उपजी चिंताविहीन मानसिकता की झलक नागरिकता अधिनियम, १९५५ में साफ देखी जा सकती है। अधिनियम का पूरा जोर केवल प्रक्रिया एवं औपचारिकता पर है।

पाँच दशकों के बाद, देश आप्रवासियों की समस्या से अनेक मोर्चों पर जूझ रहा है। जम्मू–काश्मीर तथा देश के अन्य भागों में आतंकवाद का एकमात्र कारण वे अवैध आप्रवासी हैं, जिन्हें घुसपैठिया कहा जाता है। पश्चिम बंगाल तथा उत्तर पूर्वी राज्यों के कई जिलों में आबादी के स्वरूप में मूलभूत परिवर्तन हो गया है। उत्तर पूर्वी राज्यों में विदेशी घुसपैठियों के विरूद्ध लगभग तीन दशकों से जनआंदोलन सुलग रहे हैं। दिल्ली, मुंबई, कोलकाता जैसे बड़े शहरों में रह रहे बांग्लादेशियों की संख्या लाखों में है। भारत में अवैध रूप से रह रहे पाकिस्तानियों की संख्या भी नगण्य नहीं है। पाकिस्तान अपने इन नागरिकों का उपयोग जासूसी और तोड़–फोड़ करने के लिए करता है।

यह कहना कतई अतिश्योक्ति नहीं है कि देश की आंतरिक सुरक्षा एवं मूलभूत संवैधानिक ढाँचे के लिए आप्रवासी एक गंभीर खतरा बन गये हैं। इटली में जन्मी औरत के प्रधानमंत्री बनने की संभावना तो एक विशाल पहाड़ रूपी समस्या की चोटी मात्र है। चोटी महत्त्वहीन नहीं है। पर आवश्यकता समस्या को समग्र रूप से हल करने की है, शिखर पर कुछ लीपापोती करने की नहीं।

समस्या पर देश भर में चल रही बहस का मुद्दा यह है कि क्या विदेश में जन्मे भारतीय नागरिकों को देश में जन्मे नागरिकों के समान अधिकार प्राप्त होने चाहिए। जन्म एक जैविक प्रक्रिया है। इस प्रक्रिया के घटित होने के स्थान का व्यक्ति के माानस पर अत्यन्त सीमित प्रभाव पड़ता है। विश्व भर के कानूनों में सुविधा की दष्टि से जन्मस्थान को कुछ महत्त्व दिया गया है। पर इसे एकमात्र महत्वपूर्ण पहलू मानने का कोई औचित्य नहीं है।

इस संदर्भ में अंतर्राष्ट्रीय विधिशास्त्र में अधिवास की अवधारणा अत्यन्त महत्वपूर्ण है। अधिवास (domicile) केवल जन्मस्थान पर आधारित नहीं होता। अधिवास का आधार संबंधित व्यक्ति की मंशा एवं मानसिकता है। अधिवास की अवधारणा को केरल उच्च न्यायलय ने शंकरन होरिंदन वि. लक्ष्मी भारती (१९६४, केरल २४४) के प्रकरण में स्पष्ट किया था। कृष्णन नामक एक व्यक्ति जो केरल का निवासी एवं अधिवासी था, उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए १९२५ में इंग्लैड गया था। कुछ समय बाद उसके माता–पिता ने उसे वित्तीय सहायता प्रदान करने से इन्कार कर दिया। इंग्लैड की एक महिला मित्र की सहायता से उसने १९३९ में शिक्षा पूर्ण की और इंग्लैड के शहर शेफील्ड में चिकित्सक के रूप में कार्य प्रारंभ किया। भाग्य ने उसका साथ दिया और उसने अथाह संपत्ति अर्जित की। उसने शेफील्ड में एक विशालकाय मकान भी खरीदा। कुछ समय के लिए उसने ब्रिटिश सरकार के स्वास्थय विभाग के लिए भी कार्य किया। कृष्णन की मत्यु इंग्लैड में ही हुई। तीस वर्ष तक वह इंग्लैड में रहा। इस अवधि में वह एक बार भी भारत नहीं आया। लेकिन भारत में रहने वाले अपने मित्रों एवं संबंधियों को लिखे

पत्रों में सदा यह लिखता रहा कि वह अंततः भारत लौटना चाहता है। इस तथ्य के आधार पर केरल उच्च न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि कृष्णन का अधिवास भारत में स्थित था। वह मानसिक रूप से भारत से जुड़ा था अतः भारत का अधिवासी था।

विधि का यह सर्वमान्य सिद्धांत है कि कोई व्यक्ति किसी देश की नागरिकता लेने के लिए तभी योग्य होता है जब वह यह सिद्ध कर दे कि वह उस देश का अधिवासी है। साथ ही व्यक्ति के लिय यह सिद्ध करना भी आवश्यक होता है कि उसने अपने मूल अधिवास के देश को पूरी तरह मन–मस्तिष्क से त्याग दिया है। अधिकतर देश इस हेतु योगयताओं, अर्हताओं एवं परीक्षण की कड़ी शर्तें रखते हैं। कई बार इन के कारण नस्लवाद के तथा बंद–दरवाजा मानसिकता के आरोप लगते हैं।

भारत पर ऐसे आरोप कदापि नहीं लग सकते। भारतीय कानून अन्तर्राष्ट्रीय मानदण्डों के ठीक विपरीत खुलेपन के अति के करीब है। हमारे यहाँ यह पता करने का कोई प्रयास ही नहीं किया जाता कि नागरिकता का इच्छुक व्यक्ति किस हद तक हमारे देश में रच–मच गया है। उसके भारतीयकरण को मापने का न कोई पैमाना है और न इस संबंध में कोई विधिक प्रावधान। नागरिकता प्रदान करने का भारतीय कानून इस संबंध में विश्व के सरलतम कानूनों में से एक है। न व्यक्ति के मन–मस्तिष्क के बारे में कोई प्रश्न, न उसके इरादों के बारे में – बस एक फार्म भर कर कलेक्टर के दफ्तर में जमा करने वाला लगभग प्रत्येक व्यक्ति नागरिकता हेतु सुपात्र है। उसे भारतीय संविधान और भारत के नियम–कानूनों की जरा भी जानकारी न हो तो भी वह नागरिक बन जाएगा।

नागरिकता अधिनियम के अंर्तगत भारतीय नागरिकता दो प्रकार से प्राप्त की जा सकती है। पहला तरीका धारा ५ के अंतर्गत पंजीकरण के माध्यम से है। दूसरा तरीका धारा ८ के अंतर्गत नैचुरलाइजेशन का है जो कुछ देशों के नागरिकों को ही उपलब्ध है। इसके अंतर्गत आवेदन देने वाले व्यक्ति के लिए यह आवश्यक है कि वह भारत में नौ वर्ष तक रहा हो। ऐसी कोई शर्त धारा ५ में नहीं है। धारा ८ के आवेदक को संविधान की आठवीं अनुसूची में वर्णित एक भारतीय भाषा का ज्ञान होना चाहिए। धारा ५ के प्रार्थी हेतु यह भी आवश्यक नहीं है। किसी भी प्रकार के आवेदक से यह अपेक्षा नहीं है कि उसे भारतीय परंपराओं एवं संस्कृति की थोड़ी सी जानकारी तो हो। आश्चर्य यह है कि कानून में कहीं कोई ऐसा प्रावधान नहीं है जो अधिकारियों को यह बाध्य करे कि वे आवेदक की पृष्ठभूमि के बारे में उसके मूल देश से जानकारी एकत्र करें। यही नहीं नागरिकता के आवेदनपत्र फार्म में यह घोषणा करने की भी आवश्यकता नहीं है कि आवेदक भारत में स्थायी रूप से निवास करने का इच्छुक है। गोया, भारत एक देश नहीं धर्मशाला हो; जब तक रहिए, सब अधिकारों के साथ रहिए, और जब जी चाहे पल्ला झाड़ कर चलते बनिए।

एक उदाहरण के रूप में सोनिया गाँधी के प्रकरण पर विचार करना उपयुक्त होगा। जब सोनिया गाँधी ने भारतीय नागरिकता के लिए आवेदन फार्म भरा था तब वे किसी भारतीय भाषा का कखग भी नहीं जानती थी। भारतीय संस्कृति, परंपरा, संविधान एवं कानूनों के विषय में उनके ज्ञान के बारे में कुछ नहीं कहा जा सकता। आज तक देश को यह नहीं मालूम कि वे स्थायी रूप से भारत की हो गयी हैं या उनके दिल का एक कोना अभी भी इटली के लिए धड़कता है। कानूनी भाषा में कहें तो इस संभावना से इन्कार नहीं किया जा सकता कि वे इटली की अधिवासी हैं। कोई बड़ी बात नहीं कि उनके नाम पर इटली में कुछ सम्पत्ति हो तथा वे अपने मायके वालों को लिखे पत्रों में इटली की जमीन पर

अपने अंतिम दिन बिताने की इच्छा व्यक्त करती हों। इसे विडम्बना ही कहा जाएगा कि इस प्रकार का व्यक्ति भारत की नागरिकता अत्यन्त सहज तरीके से प्राप्त कर सकता है।

स्थिति यह है कि कोई भी विदेशी भारत में आकर झूठ–मूठ का विवाह कर अधिकारपूर्वक नागरिकता के लिए आवेदन कर सकता है। उसके इरादे कितने ही कुत्सित क्यों न हों, भारतीय नागरिकता अधिनियम उसे रोक नहीं सकता। इस तरह की विधिक स्थिति से उत्पन्न होने वाले खतरों को समझाने की आवश्यकता नहीं है। जिस देश में पिछले दो दशकों में लगभग एक करोड़ विदेशी आए हों, वहाँ इस प्रकार की संभावनाओं को नजरअंदाज करना आत्मघाती सिद्ध हो सकता है।

आज आवश्यकता इस बात की है कि नागरिकता अधिनियम का समग्र पुनरीक्षण किया जाए। १९५५ में पारित इस कानून में १९८६ तथा १९९२ में संशोधन किया गया था। संसद इसे पुनः संशोधित कर सकती है। ऐसा प्रावधान किया जा सकता है कि नागरिकता का इच्छुक व्यक्ति यह सिद्ध करे कि वह मन–मस्तिष्क से भारतीय बन चुका है या कि वह भारत का अधिवासी है। यह प्रावधान करना भी उचित होगा कि पूर्व में जिनको नागरिकता प्रदान की गयी थी, उनके प्रकरणों पर पुनर्विचार किया जाए। यदि पूर्व में किसी अयोग्य व्यक्ति को नागरिकता प्रदान की गयी हो तो संशोधित अधिनियम के तहत नागरिकता समाप्त की जानी चाहिए। नागरिकता समाप्त करने के बारे में कानून बनाने की संसद की संवैधानिक क्षमता पर किसी शंका की कोई गुंजाइश नहीं है। संविधान का अनुच्छेद ११ इस संबंध में निहायत स्पष्ट है।

विदेश में जन्मे भारतीय नागरिकों को सर्वोच्च पदों पर बैठने से रोकने के लिए संविधान में संशोधन की बात कुछ राजनेता कर रहे हैं। आवश्यकता संविधान संशोधन की नहीं, संविधान के वर्तमान प्रावधानों के समुचित उपयोग की है। राष्ट्र हित में यह आवश्यक हो गया है कि हम जर्मन बेसिक कानून से शिक्षा ग्रहण करें। नीलफुर शायगन जर्मनी में जन्मी–पली–बढ़ी होने के बावजूद जर्मनी की नागरिकता प्राप्त नहीं कर सकी। क्या भारत की नागरिकता प्राप्त करना भी उतना ही कठिन नहीं होना चाहिए? आखिर भारतीय नागरिकता इतनी आसानी से उपलब्ध क्यों है?

अनिल चावला

१३ अक्तूबर २००२